अध्याय – 7
पादप प्रजनन
(Plant Breeding)

7.1. परिचय :

परम्परागत कृषि से मानव तथा पशुओं के खाद्य पदार्थ के लिए कम मात्रा में अन्न व चारा उत्पादित होता है। अच्छे फसल प्रबन्धन के उपायों तथा भू क्षेत्रफल बढ़ाने से उत्पादन एक सीमित मात्रा तक बढ़ सकता है। पादप प्रजनन एक ऐसी प्रौद्योगिकी है जिससे फसलों की उन्नत किस्मों को विकसित कर उनसे उत्पादन की बढ़ोतरी की जा सकती है। भारत में 1970 के दशक में गेहूँ तथा धान की बहुत सी उच्च उत्पादन तथा रोग निरोधक किस्मों का विकास पादप प्रजनन तकनीकों के प्रयोग से किया गया। परिणामस्वरूप खाद्य उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई। यह प्रावस्था सामान्यतः हरित क्रान्ति के नाम से जानी जाती है।

7.2. पादप प्रजनन क्या है ?

फसलों के जीनप्ररूप में मानव के लिए उपयोगी परिवर्तन करने की क्रिया को पादप प्रजनन कहते है। पादप प्रजनन में हम उन सिद्धान्तों एवं विधियों का अध्ययन करते है, जिनसे फसलों में उपयोगी परिवर्तन किए जाते है। अतः पादप प्रजनन पादप प्रजातियों का एक उद्देश्यपूर्ण परिचालन है, ताकि अच्छी पादप किस्में तैयार की जा सकें। यह किस्में खेती के लिए उपयोगी, अधिक उत्पादन करने वाली एवं रोग प्रतिरोधी होती हैं। प्राचीन काल से ही पारम्परिक रूप में पादप प्रजनन पर कार्य चल रहा है। उस अतीत काल में मानव ने कुछ जंगली पौधों को उगाने के लिए चुना। जंगली जातियों को खेती करने या मानव प्रबन्ध में उगाने को ग्राम्यन (domestication) कहते हैं। ग्राम्यन पादप प्रजनन के इतिहास की प्रथम अवस्था है। यह पादप प्रजनन का सबसे महत्त्वपूर्ण चरण है, क्योंकि इसके बाद ही पादप जातियाँ प्रजनन के लिए उपलब्ध हो पाती हैं। वर्तमान में वृक्षों, औषधीय पौधों, सूक्ष्म जीवों आदि का ग्राम्यन हो रहा है। पेनिसिलीन के उत्पादन के लिए पेनिसीलियम का ग्राम्यन एक अच्छा उदाहरण है। प्राचीन काल में ग्राम्यन के लम्बे समय के दौरान फसलों में प्राकृतिक चयन के कारण परिवर्तन हुए तथा मानव ने भी खेती के लिए उपयोगी लक्षणों का जाने अनजाने में चयन किया होगा।

आरंभ में पौधें के बीज आक्रमणकारियों, आदिवासियों तथा व्यापारियों के द्वारा लाए गए होंगे। किसी पादप जाति या किस्म को उस स्थान पर, जहाँ पर वह पहले पाई या उगाई न जाती रही हो, ले जाकर उगाना पादप पुरःस्थापन (Plant introduction) कहलाता है। पादप पुरःस्थापन पादप प्रजनन की एक पुरानी और आज भी महत्त्वपूर्ण विधि है।

7.3. पादप प्रजनन में आनुवंशिकी का महत्त्व :

आनुवंशिकी के सिद्धान्तों की खोज के पहले पादप प्रजनकों को पौधों के लक्षणों की उत्पत्ति, उनकी वंशागति तथा विविधता के कारणों का ज्ञान नहीं था। प्रजनन विधियाँ व चयन वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित नहीं थे। अतः उस समय, पादप प्रजनन मुख्य रूप से, एक कला थी। परन्तु मेंडल ने 1865 में वंशागति के नियमों का प्रतिपादन किया। इन नियमों की 1900 में पुनः खोज हुई। बाद में जीन अन्योन्यक्रिया, सहलग्नता की खोज हुई तथा यह भी ज्ञात हुआ कि जीन गुणसूत्रों में स्थित होते हैं।

मेंडल के नियमों के अनुसार लक्षण, जीन द्वारा नियन्त्रित होते हैं। जीनों में विसंयोजन तथा स्वतन्त्र अपव्यूहन होने के कारण लक्षणों में विविधता उत्पन्न होती है। जीवों में गुणात्मक एवं मात्रात्मक लक्षण पाये जाते हैं। इन दोनों ही प्रकार के लक्षणों की वंशागति मेंडल के मूलभूत सिद्धान्तों के अनुसार होती है। पादप प्रजनकों द्वारा पहले दो किस्मों का आपस में संकरण किया जाता है। इस संकरण से प्राप्त F_1 पीढ़ी (संकर पीढ़ी) में स्वपरागण किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त F_2 पीढ़ी तथा बाद की पीढ़ियों में नए एवं उत्कृष्ट जीन संयोजनों वाले पौधों का चयन कर एक नई किस्म का विकास किया जा सकता है। कभी–कभार जीनों में सहलग्नता पाई जाती है। ऐसी दशा में एक वांछनीय जीन के साथ एक अवांछनीय जीन दृढ़ सहलग्न होने पर वांछनीय जीन का चयन काफी असुविधाजनक हो जाता है। इस प्रकार पादप प्रजनन विधियाँ आनुवंशिकी के सिद्धान्तों पर आधारित होती

है। पादप प्रजनक द्वारा फसल सुधार की परियोजनाओं का प्रारूप आनुवंशिकी सिद्धान्तों के आधार पर तैयार किया जाता है।

7.4. फसलों में जनन विधियाँ :

एक पादप प्रजनक को उस पादप तंत्र का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए जिसको उन्नत बनाना उसका लक्ष्य है। किसी भी फसल में पादप प्रजनन विधि के विषय में निर्णय लेने से पूर्व उसके जनन तंत्र का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में यह जानना आवश्यक है कि इस फसल में जनन लैंगिक है अथवा अलैंगिक, परागण स्वपरागण है अथवा परपरागण। इसके अतिरिक्त पुष्प संरचना व पुष्प जैविकी का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। जीवों में संततियों के उत्पन्न होने की विधि को जनन विधि कहते हैं। फसलों में जनन मुख्यतः दो प्रकार का होता है – (i) लैंगिक जनन तथा (ii) अलैंगिक जनन।

7.4.1. लैंगिक जनन :

लैगिंक जनन में नर एवं मादा युग्मकों के संयोग से युग्मनज की उत्पत्ति होती है, जो कि भ्रूण में परिवर्धित होता है। इस भ्रूण से पुनः नये पौधे में परिवर्धन होता हैं

लैंगिक जनन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि परागकण, परागकोष से पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचे। पराग के स्थानान्तरण के इस प्रक्रम को ही परागण कहते हैं। जब किसी पुष्प के परागकोष में उत्पन्न परागकण उसी (या उसी पौधे पर उत्पन्न किसी अन्य पुष्प) के वर्तिकाग्र पर पहुँचते हैं, तो उसे स्वपरागण (self-pollination) या स्वनिषेचन (autogamy) कहते हैं। परपरागण (cross-pollination) या परनिषेचन (allogamy) में किसी पुष्प के परागकोष में उत्पन्न परागकण अन्य पौधों पर उत्पन्न पुष्पों के वर्तिकाग्रों पर जाते हैं। किसी फूल के पहली बार खुलने या खिलने को पुष्पन (anthesis) कहते हैं।

7.4.2. अलैंगिक जनन :

नर व मादा युग्मकों के संयोग या निषेचन के बिना संततियों के उत्पन्न होने को अलैंगिक जनन कहते है। यह दो प्रकार का होता है : (i) कायिक जनन (vegetative) एवं (ii) असंगजनन (Apomixis)। किसी जनक पौधे के कायिक अंगों से नये संतति पौधे उत्पन्न होते हैं, तो उसे कायिक जनन कहते हैं। यह पौधों के रूपान्तरित तनों से (जैसे आलू, प्याज, अरबी, पुदीना आदि), पुष्प पत्र–प्रकलिका में रूपान्तरित से (जैसे लहसुन)। अधिकांश फलों के तने की कटिंग, चश्मा लगाने, कलम, दाब लगाने एवं गूटी द्वारा कायिक प्रवर्धन किया जाता है। असंगजनन में भ्रूण एवं बीज का विकास निषेचन के बिना होता है।

7.5. परागण विधियाँ :

वह प्राकृतिक विधि जिसके अन्तर्गत पुष्प परागण के लिए परागकण या तो उसी पुष्प से अथवा किसी अन्य पौधे पर स्थित पुष्प से आते हैं, परागण विधि कहलाती है। परागण दो प्रकार का होता है : (i) स्वपरागण एवं (ii) परपरागण। विभिन्न फसलों को परपरागण तथा स्वपरागण के परिणाम के आधार पर निम्नलिखित तीन वर्गों में बाँटा गया है : (i) स्वपरागित (self-pollinated), (ii) परपरागित (cross-pollinated), तथा (iii) बहुधा परपरागित (often cross-pollinated) फसलें।

7.5.1. स्वपरागित फसलें :

वे फसलें जिनमें प्राकृतिक रूप से स्वपरागण होता है, स्वपरागित फसलें कहलाती हैं। (सारणी 7.1)। इन फसलों में 95 प्रतिशत से अधिक स्वपरागण तथा 5 प्रतिशत से कम परपरागण होता है। परपरागण की मात्रा मुख्य रूप से पादप जाति, फसल की किस्म, तापमान, नमी स्थान एवं कीटों की उपस्थिति आदि पर निर्भर होती है। स्वपरागित फसलों में पुष्प उभयलिंगी होता है। ऐसा माना जाता है कि स्वपरागित फसलें पूर्व में परपरागित थी।

सारणी–7.1. स्वपरागित फसलें, परपरागित फसलें एवं बहुधा परपरागित फसलें

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम	
	हिन्दी	**अंग्रेजी**
	स्वपरागित फसलें	
गेहूँ	*ट्रिटिकम एस्टिवम*	*Triticum aestivum*
जौ	*होर्डियम वुल्गेयर*	*Hordeum vulgare*
धान	*ओराइजा सेटाइवा*	*Oryza sativa*
मटर	*पाइसम सेटाइवम*	*Pisum sativum*
मूँगफली	*एरैकिस हाइपोजिया*	*Arachis hypogaea*
चना	*साइसर एराइटिनम*	*Cicer arietinum*
मूँग	*विग्ना रेडिएटा*	*Vigna radiata*
सोयाबीन	*ग्लाइसीन मैक्स*	*Glycine max*
टमाटर	*लाइकोपर्सिकान एस्कुलेंटम*	*Lycopersicon esculentum*
भिंडी	*एबेल्मोस्कस एस्कुलेंटम*	*Abelmoschos esculentum*
बैगन	*सोलेनम मेलान्जेना*	*Solanum melongena*
मिर्च	*कैप्सिकम ऐनम*	*Capsicum annum*
आलू	*सोलेनम ट्यूबरोसम*	*Solanum tuberosum*
तिल	*सिसेमम इंडिकम*	*Sesamum indicum*
	परपरागित फसलें	
मक्का	*जिया मेज*	*Zea mays*
बाजरा	*पेन्निसेटम ग्लूकम*	*Pennisetum glaucum*
सूरजमुखी	*हेलिऐंथस ऐनस*	*Helianthus annus*
रिंजका	*मेडिकैगो सेटाइवा*	*Medicago sativa*
गन्ना	*सैकेरम आफिसिनेरम*	*Saccharum officinarum*
गाजर	*डाकस कैरोटा*	*Daucus carota*
फूल गोभी	*ब्रैसिका ओलेरेसिया*	*Brassica oleracea*
पत्ता गोभी	*ब्रैसिका ओलेरेसिया*	*Brassica oleracea*
मूली	*रैफनस सेटाइवस*	*Raphanus sativus*
प्याज	*एलियम सेपा*	*Allium cepa*
खरबूज	*कुकुरबिटा मोस्कैटा*	*Cucurbita moschata*
तरबूज	*सिट्रुलस वुल्गेरिस*	*Citrullus vulgaris*
धनिया	*कोरिऐन्ड्रम सेटाइवम*	*Coriandrum sativum*
आम	*मैंजीफेरा इंडिका*	*Mangifera indica*
पपीता	*कैरिका पपाया*	*Carica papaya*
	बहुधा परपरागित फसलें	
ज्वार	*सोर्घम बाइकलर*	*Sorghum bicolor*
कपास	*गासीपियम स्पेसीज*	*Gossypium species*
फाबा सेम	*विसिया फाबा*	*Vicia faba*
अरहर	*कैजनस कैजान*	*Cajanus cajan*
राई	*ब्रैसिका जंसिया*	*Brassica juncea*
पीली सरसों	*ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस वेराइटी पीली सरसो*	*Brassica campestris variety yellow sarson*
ट्रिटिकेल	*ट्रिटिकेल हेक्साप्लाएडे*	*Triticale hexaploide*

7.5.1.1 पौधों में स्वपरागण को बढ़ावा देने वाले अभिलक्षण

(क) **निमीलित परागण (Cleistogamy)** : जब द्विलिंगी पुष्प कभी भी नहीं खुलते हैं, तब इससे पुष्प के पास स्वपरागण के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं बचता, क्योंकि बाहरी परागकण के वर्तिकाग्र तक पहुँचने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस दशा को निमीलित परागण कहते हैं। उदाहरण, मूँगफली, गेहूँ, जौ, चांवल तथा चना आदि। मूँगफली में पुष्प जमीन के अन्दर रहते हैं जिससे परपरागण की संभावना ही खत्म हो जाती है। गेहूँ जैसी फसलों में परपरागण 3 प्रतिशत तक संभव हो जाता है।

(ख) मूँग, उड़द, चना आदि दलहनी फसलों में वर्तिकाग्र व परागकोष दो दलों (Petals) से मिलकर बने कूटक (Keel) से घिरे रहते हैं। इसके फलस्वरूप, इन जातियों में स्वपरागण होता है।

(ग) शाकीय फसलों जैसे बैंगन, टमाटर आदि में परागकोष वर्तिकाग्र से कुछ ऊपर उसके चारों ओर विन्यस्त होते हैं। जिसके परिणामस्वरूप परागकोषों के फटने पर अधिकतर परागकण उसी पुष्प के वर्तिकाग्र पर गिरते हैं, जिससे इन फूलों में स्वपरागण होता है।

7.5.2. परपरागित फसलें :

परपरागण वायु, जल या कीटों के द्वारा होता है। कई प्रमुख फसलों में परपरागण होता है (सारणी 7.1)। अधिकतर परपरागित फसलों में 5–10 प्रतिशत तक स्वपरागण भी होता है।

7.5.2.1. पौधों में परपरागण को बढ़ावा देने वाले अभिलक्षण :

(क) **एकलिंगता (Unisexuality)** : कई फसलों में पुष्प एकलिंगी होते हैं। ये फसलें (i) एकलिंगाश्रयी (Dioecious) (ii) द्विलिंगाश्रयी (Monoecious) होती हैं। जब एकलिंगी नर तथा मादा पुष्प अलग–अलग पौधों पर पाये जाते हैं, तब ऐसे पौधों को एकलिंगाश्रयी कहते हैं। अतः इनमें परपरागण ही होता है। उदाहरण, पपीता, लोकी, तुरई। द्विलिंगाश्रयी पौधों में नर व मादा पुष्प एक ही पौधे पर पाये जाते हैं। उदाहरण मक्का। इस तरह की फसलों में भी परपरागण होता है।

(ख) **भिन्न कालपक्वता (Dichogamy)** : जब परागकण व वर्तिकाग्र भिन्न समय पर परिपक्व होते हैं, इस दशा को भिन्न कालपक्वता कहते हैं। फसलों में इस दशा के दो कारण हो सकते हैं : (i) स्त्रीपूर्वता (Protogyny) एक पुष्प विशेष में वर्तिकाग्र, परागकणों के पक्व होने से पहले ही ग्राही हो जाते है, और परागकणों के पक्व होने तक परपरागण के फलस्वरूप अग्राही हो जाते है, जैसे बाजरा। (ii) नरपूर्वता (Protandry) : जब एक पुष्प में परागकण, वर्तिकाग्र के ग्राही होने से पहले ही पक्व हो जाते है, और किसी अन्य पुष्प के वर्तिकाग्र पर परागण करते है, उसी पुष्प पर नहीं, क्योंकि उस पुष्प का परागकण, वर्तिकाग्र के ग्राही होने के समय तक समाप्त हो जाता है, जैसे मक्का, चुकन्दर आदि।

(ग) **एक से अधिक अभिलक्षण** : कुछ फसलों में एकलिंगता (द्विलिंगाश्रयी) व नरपूर्वता दोनों ही पाई जाती है, जैसे मक्का।

(घ) **वर्तिकाग्र पर मोमी आवरण** : कुछ फसलों के वर्तिकाग्र पर एक मोमी आवरण होता है। इस आवरण के टूटने पर ही वर्तिकाग्र ग्राही होती है। यह आवरण फूलों पर कीटों के बैठने से टूटता है तथा कीटों के शरीर पर लगे परागकणों द्वारा इन पुष्पों में परपरागण हो जाता है, जैसे रिंजका।

(ङ) **स्वअनिषेच्यता (Self-incompatibility)** : कई फसलों में एक पौधे के पुष्पों द्वारा उत्पन्न जीवित एवं सक्रिय परागकण उसी पौधे के पुष्पों में निषेचन करने में असमर्थ होते हैं, इसे स्वअनिषेच्यता कहते है। अतः फसलों में स्वअनिषेच्यता के कारण केवल परपरागण होता है जैसे तम्बाकू, मूली, गोभी आदि।

(च) **नरबन्ध्यता (Male sterility)** : जब फसलों के पौधों द्वारा उत्पन्न परागकण निर्जीव एवं निष्क्रिय होते हैं, इस दशा को नरबन्ध्यता कहते हैं। प्रायः

फसलों में प्राकृतिक रूप से नरबन्ध्यता नहीं पायी जाती। नरबन्ध्यता वाले पौधों में बीज परपरागण से ही बनेंगे।

7.5.3. बहुधा परपरागित फसलें :

कुछ फसलों (सारणी 7.1) में परपरागण 5 प्रतिशत से अधिक होकर 50 प्रतिशत तक भी हो सकता है, ऐसी फसलों को बहुधा परपरागित फसलें कहते हैं।

7.6. पादप प्रजनन विधियाँ :

जैसा कि आपने इस अध्याय में पढ़ा है कि पादप प्रजनन की विषय वस्तु पौधों के आनुवंशिक संगठन में सुधार करना होता है। इस सुधार की प्राथमिक आवश्यकता लक्षणों में आनुवंशिक विविधता ही पादप प्रजनन कार्यक्रमों का आधार होती है। पादप प्रजनन में इसी विविधता का चयन, संकरण या दोनों को लेकर फसलों में सुधार किया जा सकता है। पादप प्रजनन विधियों को मोटे तौर पर निम्न पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है। आजकल इस फसल सुधार कार्यक्रमों में एक विधि ऊतक संवर्धन को भी सम्मिलित किया जा सकता है। ये विधियाँ निम्न प्रकार है :

(i) पादप पुरःस्थापन (Plant introduction)

(ii) चयन या वरण (Selection)

(iii) संकरण (Hybridization)

(iv) उत्परिवर्तन (Mutation)

(v) बहुगुणिता (Polyploidy)

(vi) ऊत्तक संवर्धन (Tissue culture)

7.6.1. पादप पुरःस्थापन :

फसल सुधार के लिए आवश्यक उपरोक्त विधियों में विविधता उत्पन्न करना एक उद्देश्य है। ग्राम्यन तथा पादप पुरःस्थापन विविधता उत्पादन की पुरानी विधियाँ हैं। ग्राम्यन के द्वारा जंगली जातियों से नई फसलों का विकास होता है, जबकि पादप पुरःस्थापन से नई फसलें तथा पूर्ववर्ती फसलों के नए जीनप्ररूप प्राप्त होते हैं। पादप पुरःस्थापन फसल सुधार की सबसे तेज तथा सरल विधि है। पादप पुरःस्थापन वह क्रिया है जिसमें किसी फसल के विशेष जीनप्ररूपों को उस स्थान से जहाँ वह प्रकृति में उगते हैं या उगाये जाते हैं, एक ऐसे नए स्थान पर लाया जाता है जहाँ भविष्य में इनका प्रयोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कृषि के लिए किया जाता है। ऐसे पौधों को या तो विदेशों से लाया जाता है तो इसे विदेशी संग्रह कहते है, या स्वदेश के ही दूसरे भागों से लाया जाता है तो इसे देशज संग्रह कहते हैं। पिछले कुछ वर्षों में धान को पंजाब में, गेहूँ को पश्चिम बंगाल में तथा अंगूर को हरियाणा में उगाना पादप पुरःस्थापन के उदाहरण है।

पादप पुरःस्थापन को निम्न दो वर्गों में बाँटा जा सकता है :

(क) प्राथमिक पुरःस्थापन एवं

(ख) द्वितीयक पुरःस्थापन

(क) प्राथमिक पुरःस्थापन : जब पुरःस्थापित पौधे को सीधे ही खेती के लिए काम में लिया जाता है, तब इसको प्राथमिक पुरःस्थापन कहते है। उदाहरण गेहूँ की किस्में लर्मा रोजो व सोनारा 64, जिनको मेक्सिको से लाया गया था।

(ख) द्वितीयक पुरःस्थापन : जब पुरःस्थापित किस्म के पौधों में चयन करके या उसका किसी स्थानीय किस्म के साथ संकरण करके नई उन्नत किस्में विकसित की जाती है, तो इसे द्वितीयक पुरःस्थापन कहते हैं। अधिकतर द्वितीयक पुरःस्थापन पादप प्रजनन के लिए ज्यादा उपयोगी है। उदाहरणार्थ, गेहूँ की किस्मों कल्याण सोना व सोनालिका का पुरःस्थापित विभेदों से चयन द्वारा विकास, पुरःस्थापित बौनी किस्मों का स्थानीय किस्मों से संकरण करके गेहूँ व धान की बौनी किस्मों का विकास।

आजकल भारत में कृषि एवं उद्यान सम्बन्धी पादप पुरःस्थापन के लिए केवल एक संस्था, राष्ट्रीय पादप आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो (NBPGR) है। इसका मुख्यालय भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली में स्थित है।

7.6.2. चयन या वरण (Selection) :

चयन, पादप प्रजनन की प्राचीनतम विधि है और फसलों को सुधारने व उन्नत बनाने के समस्त कार्यक्रमों का यह आधार भी है। किसी विविधतापूर्ण पादप समष्टि में से उपयुक्त या उत्कृष्ट लक्षणों वाले पौधों को छाँटकर अलग करना तथा उनसे अगली पीढ़ी उगाना ही चयन कहलाता है। इस प्रकार विविधता एवं चयन पादप प्रजनन की दो मुख्य

क्रियाएँ हैं। विविधता के बिना चयन असंभव है, और बिना चयन के केवल विविधता से किसी भी फसल के किसी भी लक्षण में कोई भी सुधार असंभव है। परन्तु चयन विधि में आनुवंशिक विविधता का सृजन नहीं किया जा सकता, क्योंकि पौधों का चयन उपलब्ध जननद्रव्य से ही किया जाता है। चयन, या तो प्राकृतिक हो सकता है या कृत्रिम। प्राकृतिक चयन में अधिक समय लगता है और लक्षणों में परिवर्तन वांछित दिशा में होना भी आवश्यक नहीं है। परन्तु कृत्रिम चयन में लक्षणों में सुधार न केवल शीघ्र होता है, बल्कि वांछित दिशा में ही होता है। चयन केवल वंशागत विविधता के लिए ही प्रभावी होता है।

स्वपरागित, परपरागित तथा कायिकीय प्रवर्धित फसलों के लिए अलग–अलग अनेक चयन विधियाँ प्रचलित है, जिनमें निम्न उल्लेखनीय हैं : (i) शुद्ध वंशक्रम चयन (Pure line selection) (ii) संहति चयन (Mass selection) (iii) संतति चयन (Progeny selection) (iv) क्लोनल चयन (Clonal selection)।

7.6.2.1. शुद्ध वंशक्रम चयन :

किसी एक स्वपरागित तथा समयुग्मजी पौधे की संतति को शुद्ध वंशक्रम कहते हैं। शुद्ध वंशक्रम सिद्धान्त का प्रतिपादन जोहैंसेन ने 1903 में दिया। शुद्ध वंशक्रम चयन का आधार एक पौधा है। किसी विविधतापूर्ण समष्टि से शुद्ध वंशक्रमों का चयन, शुद्ध वंशक्रम चयन कहलाता है तथा यह विधि केवल स्वपरागित फसलों जैसे गेहूँ के लिए उपयोगी है।

इन पादपों में शुद्ध वंशक्रमों का चयन ऐसी समष्टि से किया जाता है जिसमें आनुवंशिक स्तर पर विभिन्नता उपलब्ध हो। इस विधि में समष्टि में से उत्कृष्ट पौधों का चयन वांछित लक्षणों के आधार पर किया जाता है। प्रत्येक चयनित पौधे का बीज अलग–अलग इकट्ठा करते हैं और एकल पादप संततियाँ उगाते हैं। एकल पादप संततियों में से उत्कृष्ट एकल पादप संतति का चयन किया जाता है। इस उत्कृष्ट एकल पादप संतति में पाई जाने वाली विभिन्नता केवल वातावरणीय होती है। उत्कृष्ट एकल पादप संतति के पौधों का जीनप्ररूप समयुग्मनज तथा एक समान होता है, इस समष्टि को संमागी समष्टि कहते हैं। इस प्रकार की समष्टि को एक नई किस्म के रूप में विमोचित किया जाता है। अतः स्वपरागित फसलों की किस्में शुद्ध वंशक्रम होती है।

7.6.2.2. संहति चयन :

परपरागित फसलों में संहति चयन से समष्टि को उन्नत किया जाता है। किन्तु स्वपरागित फसलों में इसका प्रयोग फसल की शुद्धता के लिए किया जाता है। इस विधि में आधार समष्टि से पौधों का चयन लक्षणप्ररूप (जैसे पौधों की ऊँचाई, फसल की अवधि, रोगों व कीटों के लिए प्रतिरोध, दानों के लक्षण आदि) के द्वारा ही किया जाता है। सामान्यतया 500 से 1000 पौधों का चयन करके, उनसे प्राप्त बीज को मिला लिया जाता है तथा उनमें प्राप्त पौधो में मुक्त परागण होने दिया जाता है। पौधों का चयन या तो पूरे खेत से किया जाता है या खेत को कुछ भागों में बाँटकर प्रत्येक खण्ड से बराबर संख्या में पौधों का चयन कर लिया जाता है। दोनों दशाओं में चयन किये गये पौधों का बीज मिला दिया जाता है। इस प्रक्रिया को अनेक बार दोहराया जाता है, जिससे वांछित शुद्धता व सुधार वाली फसल प्राप्त कर सके। इस उन्नत समष्टि का एक श्रेष्ठ किस्म के साथ बुआई कर परीक्षण किया जाता है। यदि यह उन्नत समष्टि, श्रेष्ठ किस्म की अपेक्षा अधिक उपज देती है, तो इसे नई किस्म के रूप में विमोचित कर दिया जाता है अन्यथा अन्य पादप प्रजनन क्रियाओं में काम में लिया जाता है।

7.6.2.3. संतति चयन :

यह चयन विधि परपरागित फसलों के लिए काम में ली जाती है और इसमें संहति चयन के अवगुण नहीं पाये जाते हैं। यह विधि चयन किये गये पौधों की संततियों के परीक्षण पर आधारित है। संतति परीक्षणों की अनेक विधियाँ है लेकिन हाफिन्स ने 1908 में ''बाली से पंक्ति'' अथवा ear to row विधि विकसित की जिसे मक्का में प्रयोग की जाती है। यह विधि निम्न चरणों में पूर्ण होती है।

प्रथम वर्ष में आधार समष्टि (पौधों) से वांछित लक्षणों के आधार पर अनेक पौधों का चयन किया जाता है। चयनित पौधों में मुक्त परागण होने दिया जाता है और प्रत्येक पौधे का बीज अलग–अलग एकत्रित किया जाता है। एकत्रित बीज के कुछ भाग से अगले वर्ष में परीक्षण किया जाता है और शेष बीज को भविष्य के लिए रख लिया जाता है।

द्वितीय वर्ष में प्रत्येक पौधे के एकत्रित बीज के कुछ भाग को संतति पंक्तियों में बोया जाता है (प्रत्येक पंक्ति में 10–50 बीज) और संततियों का मूल्यांकन करके श्रेष्ठ संततियों का चयन कर लिया जाता है।

तृतीय वर्ष में श्रेष्ठ संततियों से सम्बन्धित प्रथम वर्ष में बचाया गया बीज (श्रेष्ठ संततियों का चयन द्वितीय वर्ष में किया गया है), मिला लिया जाता है और मिश्रित बीज की बुवाई कर अगली पीढ़ी की समष्टि तैयार की जाती है।

इस प्रकार उपरोक्त तीन वर्ष के चक्र को अनेक बार दोहरा कर वांछित सुधार किया जाता है।

7.6.2.4. क्लोनल चयन :

इस प्रकार के चयन का उपयोग कायिक प्रवर्धन करने वाले पादपों में किया जाता है। जैसे गन्ना, केला, आलू इत्यादि। एक पौधे के अलैंगिक जनन से प्राप्त संततियों को क्लोन कहते हैं। एक क्लोन के सभी पौधों का जीनप्ररूप परस्पर तथा जनक पौधे के एकसमान होता है। प्रायः क्लोन के पौधों में उपस्थित विविधता वातावरणीय होती है। इस प्रकार के चयन का उपयोग क्लोनों के मध्य किया जाता है। इस विधि में लक्षणप्ररूपी गुणों के आधार पर उत्तम क्लोनों का चयन किया जाता है। उत्तम क्लोनों को स्थानीय श्रेष्ठ किस्म के साथ बुआई कर परीक्षण किया जाता है। स्थानीय श्रेष्ठ किस्म से उत्तम क्लोनों को बहुस्थानीय परीक्षणों द्वारा मूल्यांकन किया जाता है और श्रेष्ठत्तम क्लोनों का चयन कर लिया जाता है जिनको फिर गुणन के बाद नवीन किस्म के रूप में विमोचन कर दिया जाता है।

7.6.3. संकरण :

दो असमान जीनप्ररूपों वाले पौधों या किस्मों में से एक किस्म (नर जनक) के परागकणों से दूसरी किस्म (मादा जनक) के पुष्पों का परागण करके संतति प्राप्त करने की क्रिया को संकरण कहते हैं। संकरण से प्राप्त पीढ़ी को संकर या F_1 पीढ़ी कहते हैं।

जनकीय पौधों में वर्गिकीय सम्बन्ध के आधार पर संकरण को दो भागों में बाँटा गया है :

(i) अंतःजातीय संकरण (Intraspecific hybridization) : इसमें एक ही जाति की भिन्न किस्मों में संकरण किया जाता है। पादप प्रजनन में इस तरह के संकरण का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है।

(ii) अन्तरजातीय संकरण (Interspecific hybridizaton) : इसमें दो भिन्न जातियों में संकरण किया जाता है। ये भिन्न जातियाँ एक ही वंश या अलग–अलग वंशों की हो सकती हैं। ये संकरण दूरस्थ संकरण भी कहलाते हैं।

संकरण के दो मुख्य उद्देश्य हो सकते हैं : (i) संकर बीज उत्पादन एवं (ii) आनुवंशिक विविधता का उत्पादन।

संकर बीज उत्पादन : संकरण से प्राप्त F_1 पीढ़ी का उपयोग खेती के लिए किया जाता है, तो इस F_1 संकर को संकर किस्म कहते हैं। संकरण से संकर किस्मों के बीज का उत्पादन हर वर्ष किया जाता है।

आनुवंशिक विविधता का उत्पादन : इस विविधता का उपयोग किसी एक किस्म में किसी दूसरी किस्म से एक या एक से अधिक लक्षणों का स्थानान्तरण होता है।

पादप प्रजनन के लिए संकरण की क्रिया को निम्न चरणों में बाँटा जा सकता है :

(i) जनकों का चुनाव : जनकों का चुनाव संकरण के उद्देश्य पर निर्भर होता है।

(ii) जनकों का मूल्यांकन : संकरण के उद्देश्य के अनुरूप जनकों का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है।

(iii) विपुंसन : पुष्प के परिपक्व होने से पहले नर जननांगों या परागकोषों को हटाना विपुंसन कहलाता है।

(iv) थैली लगाना : मादा पुष्पों को थैली से ढ़क दिया जाता है जिसके कारण अवांछित परपरागण को रोका जा सकता है।

(v) टैग लगाना : थैली से ढ़के हुए विपुंसित पुष्प पर एक टैग लगाया जाता है जिस पर विपुंसन की दिनांक, परागण की दिनांक व संकर जनकों के नाम आदि लिखे रहते है।

(vi) परागण : परिपक्व व जननक्षम परागकणों को नर जनक से एकत्र किया जाता है, विपुंसित पुष्प की

थैली को खोला जाता है और परागकणों को ग्राही वर्तिकाग्र पर छिड़क दिया जाता है। परागण विपुंसन के अगले दिन प्रातः 7:30–10:00 बजे तक किया जाता है।

(vii) संकर (F_1) बीजों को इकट्ठा कर उनका भण्डारण : प्रत्येक संकरण से उत्पन्न बीजों को सावधानीपूर्वक अलग–अलग इकट्ठा कर धूप में अच्छी तरह सूखा लेना चाहिए। भण्डारण करते समय उपयुक्त कीटनाशी मिलाना चाहिए।

7.6.4. उत्परिवर्तन :

म्यूटेशन (Mutation) शब्द का सर्वप्रथम उपयोग डि व्रीज (de Vries) ने 1900 में किया था। किसी जीव के किसी लक्षण में आकस्मिक एवं वंशागत परिवर्तन को उत्परिवर्तन कहते है। इसी के परिणामस्वरूप नए लक्षण विकसित होते है। वह जनकों में नहीं पाए जाते। उत्परिवर्तन प्रकृति में स्वतः उत्पन्न होते रहते हैं। किसी जीन के लिए स्वतः उत्परिवर्तन दर सामान्यतया 10^{-4} से 10^{-7} तक हो सकती है। उत्परिवर्तन को कृत्रिम रूप से रसायनों के प्रयोग अथवा विकिरणों द्वारा प्रेरित किया जा सकता है तथा ऐसे पादपों का चयन एवं प्रयोग द्वारा जिनमें प्रजनन के लिए वांछनीय लक्षण स्त्रोत के रूप में हो, उत्परिवर्तन प्रजनन कहलाता है। उदाहरण – मूँग में पीत मोजेक वायरस तथा चूर्णिल आसिता के प्रति प्रतिरोधक क्षमता। उत्परिवर्तन प्रजनन की प्रक्रिया को दो चरणों में बाँटा गया है : (i) उत्परिवर्तजनन (Mutagenesis) अर्थात् फसलों को किसी उत्परिवर्तजन (Mutagen) से उपचारित करके उत्परिवर्तन का प्रेरण, तथा (ii) उत्परिवर्ती जीन का चयन।

प्रथम चरण अपेक्षाकृत आसान होता है, परन्तु द्वितीय चरण में उत्परिवर्तजन अवांछनीय उत्परिवर्ती जीनों का प्रेरण भी करते हैं। इन सभी उत्परिवर्ती जीनों में से वांछित उत्परिवर्ती जीनों का चयन कार्य बहुत कठिन है। प्रजनन विधि से नई किस्म उत्पादित करने में 6–8 वर्ष लग जाते हैं। उत्परिवर्तन प्रजनन द्वारा विश्वभर में फसलों में कई किस्में विकसित की गई जिनमें कई प्रकार के लक्षणों में सुधार हुए जैसे उपज में वृद्धि, लम्बाई में कमी, जल्दी फूल आना, प्रतिबल प्रतिरोधिता में सुधार, बड़े आमाप के दाने, गुणवत्ता में सुधार, रोगरोधिता, अनुकूलशीलता में सुधार आदि। उदाहरणार्थ – अरण्डी की विश्व प्रसिद्ध "अरूना" किस्म उत्परिवर्तन प्रजनन द्वारा विकसित की गई इसमें रोग प्रतिरोधकता तथा उच्च तेल की मात्रा पायी जाती है।

7.6.5. बहुगुणिता :

किसी जाति की कायिक कोशिकाओं में पाई जाने वाली गुणसूत्र संख्या को उस जाति की कायिक गुणसूत्र संख्या (2n) कहते हैं। हरेक जातियों के सामान्य कायिक गुणसूत्र काम्पलीमेन्ट में प्रत्येक गुणसूत्र की दो प्रतियाँ उपस्थित होती हैं, जिन्हें समजात गुणसूत्र कहते हैं। अर्थात् जीवों में जीनोम के दो सेट पाये जाते हैं। एक जीनोम के सभी गुणसूत्र एक–दूसरे से जीन अंश एवं आकारिकी में भिन्न होते हैं। अतः एक जीनोम के गुणसूत्र एक–दूसरे से जोड़े नहीं बनाते हैं। बहुगुणिता का तात्पर्य किसी जाति में एक जीनोम की दो प्रतियों से अधिक अथवा दो या अधिक जीनोम उपस्थित हों। बहुगुणिता दो प्रकार की होती है : (i) स्वबहुगुणिता तथा (ii) परबहुगुणिता।

स्वबहुगुणिता : जब एक ही जीनोम की दो से अधिक प्रतियाँ उपस्थित होती है, तो इसे स्वबहुगुणिता कहते है। उदाहरणार्थ, स्वत्रिगुणिता, स्वचतुर्गुणिता, स्वपंचगुणिता व स्वषट्गुणिता आदि। स्वबहुगुणिता की उत्पत्ति दो प्रकार से होती है। प्रथम कक्षस्थ कलिकाओं व प्ररोहाग्रो में गुणसूत्र द्विगुणन होना। अनियमित अर्धसूत्री विभाजन से 2n युग्मकों की उत्पत्ति तथा इन 2n युग्मकों के संयोग से प्राप्त संततियों में गुणसूत्रों की संख्या सामान्य की दोगुनी होगी। द्वितीय कारण कॉल्चिसीन उपचार से भी कृत्रिम रूप से गुणसूत्रों की संख्या दुगुनी हो जाती है।

परबहुगुणिता : जब किसी सजीव में दो या अधिक भिन्न जीनोम उपस्थित होते हैं उदाहरणार्थ : परचतुर्गुणिता (दो जीनोम की दो–दो प्रतियाँ), परषट्गुणिता (तीन जीनोम की दो–दो प्रतियाँ) आदि। इनकी उत्पत्ति दो भिन्न जातियों का आपस में संकरण से F_1 संकर प्राप्त करते है। F_1 सामान्यतया आंशिक या पूर्ण बंध्य होते हैं। इन F_1 संकर के गुणसूत्रों का द्विगुणन या तो स्वतः होता है (प्रकृति में) या फिर कॉल्चिसीन उपचार द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया से उभयद्विगुणीत पौधे प्राप्त होते हैं, जो कि नई पादप जातियाँ होती हैं।

पौधों के विकास में बहुगुणिता का उल्लेखनीय योगदान रहा है। एक अनुमान के अनुसार, लगभग एक–तिहाई आवृतबीजी बहुगुणित है। स्वबहुगुणिता का योगदान पौधों

के विकास में सीमित रहा है। फसल के रूप में स्वचतुर्गुणित अन्य स्वबहुगुणितों की तुलना में अधिक रहा है। उदाहरण आलू, काफी, रिंजका, मूँगफली आदि।

आवृतबीजियों में परबहुगुणिता व्यापक रूप से पाई जाती है। फसल विकास में परबहुगुणिता का योगदान स्वबहुगुणिता की तुलना में काफी अधिक रहा है। हमारी कई फसलें परबहुगुणित हैं। उदाहरण परषट्गुणित गेहूँ, परचतुर्गुणित अमेरिकन कपास, उभयद्विगुणित ब्रेसिका जातियाँ आदि।

7.6.6. ऊत्तक संवर्धन :

फसलों की पर्याप्त एवं उन्नत किस्में पारम्परिक प्रजनन तकनीकों द्वारा बढ़ती हुई खाद्यान्नों की माँग को पूरा करने में जब असफल हुई तब एक आधुनिक तकनीक का जन्म हुआ जिसे ऊत्तक संवर्धन कहते हैं। 20वीं सदी के मध्य में जीव वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि पादप के भाग से सम्पूर्ण पौधों को पुनर्जनित किया जा सकता है, उसे कर्त्तोतक कहते हैं। किसी कोशिका कर्त्तोतक से पूर्ण पादप में जनित्र होने की क्षमता पूर्णशक्तता कहलाती हैं। कर्त्तोतक का एक विशिष्ट पोष माध्यम तथा रोगाणुरहित स्थिति में पात्रे संवर्धन किया जाता है। इस पोष माध्यम में कार्बन स्त्रोत जैसे सुक्रोज तथा अकार्बनिक लवण, विटामिन, अमीनों अम्ल तथा वृद्धि नियंत्रक जैसे ऑक्सिन, साइटोकाइनिन आदि उपस्थित होने चाहिए। ऊत्तक संवर्धन विधि द्वारा पौधे के कायिक या वानस्पतिक प्रवर्धन को सूक्ष्मप्रवर्धन कहते हैं। इस विधि में बहुत छोटे कर्त्तोतक का उपयोग करके बहुत छोटे–छोटे पौधे कम समय में उत्पादित करते हैं। इनमें प्रत्येक पादप आनुवंशिक रूप से मूल पादप के समान होते हैं, जहाँ से वह पैदा हुए हैं, यह सोमाक्लोन कहलाते हैं।

इस विधि से रोगमुक्त पादपों का संवर्धन उत्पादन संभव है। प्रत्येक पादप विषाणु से संक्रमित होते हैं, परन्तु उनके विभज्योतक (शीर्ष तथा कक्षीय) विषाणु से प्रभावित नहीं होते हैं। विषाणु मुक्त पादप तैयार करने के लिए विभज्योतक को अलग कर पात्रे संवर्धन करते हैं। पादप वैज्ञानिकों ने केला, गन्ना, आलू आदि में विभज्योतक संवर्धन द्वारा व्यापारिक स्तर पर रोगमुक्त पादप तैयार किये हैं।

वैज्ञानिकों ने पादपों से एकल कोशिकाएँ अलग कर उनकी कोशिका भित्ति को सैल्यूलेज तथा पैक्टीनेज एन्जाइम की सहायता से प्लाज्मा झिल्ली द्वारा घिरा नग्न जीवद्रव्य पृथक कर लिया। प्रत्येक किस्म में वांछनीय लक्षण विद्यमान होते हैं। पादपों की दो आनुवंशिक रूप से भिन्न किस्मों से अलग किया गया जीवद्रव्य युग्मित होकर संकर जीवद्रव्य उत्पन्न करता है, जिससे नए पादप तैयार किए जाते हैं। यह संकर कायिक संकर, जबकि यह प्रक्रम कायिक संकरण कहलाता है। इस विधि द्वारा पोमेटो (आलू तथा टमाटर के जीवद्रव्य संकरण से प्राप्त कायिक संकर) तथा ब्रोमेटो (बैंगन तथा टमाटर के जीवद्रव्य संकरण से प्राप्त कायिक संकर) विकसित किये गये हैं। इन दोनों कायिक संकरों के पादपों में व्यावसायिक उपयोग के लिए वांछित समुच्चित अभिलक्षणों का अभाव था। ऊत्तक संवर्धन विधि का प्रयोग करते हुए वैज्ञानिकों ने पादपों में विभिन्नता प्राप्त की, उसे सोमाक्लोनल विभिन्नता कहते हैं। ये विभिन्नताएँ स्थायी होती हैं तथा कृषि के लिए उपयोगी होती हैं।

सारांश

फसलों में आनुवंशिक परिवर्तन के द्वारा उन्हें मनुष्य के लिए अधिक उपयोगी बनाना पादप प्रजनन है। पादप प्रजनन आनुवंशिकी एवं कोशिकानुवंशिकी के सिद्धान्तों पर आधारित होता है। किसी भी फसल में पादप प्रजनन विधि के निर्णय लेने से पूर्व उसके जनन, परागण, पुष्प संरचना व पुष्प जैविकी का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। किसी पौधे से नये पौधे या पौधों का उत्पन्न होना जनन कहलाता है। फसलों में जनन या तो लैंगिक (नर व मादा युग्मकों के संयोग से युग्मनज व नए पौधों की उत्पत्ति) अथवा अलैंगिक (बिना नर व मादा युग्मकों के संयोग से नए पौधों की उत्पत्ति) विधि से होती है। लैंगिक जनन करने वाले पौधों में या तो स्वपरागण या परपरागण होता है। फसलों को परागण के आधार पर स्वपरागित, परपरागित व बहुधा परपरागित फसलों में बाँटा गया है। पादप प्रजनन की प्राचीन विधि ग्राम्यन है। फसलों में किस्म विकास व सुधार के लिए मोटे तौर पर पाँच पादप प्रजनन विधियाँ काम में ली जाती हैं। इनमें पादप पुरःस्थापन,

चयन, संकरण, उत्परिवर्तन, बहुगुणिता है। आजकल आधुनिक तकनीक ऊतक संवर्धन से फसलों में नई किस्में प्राप्त करने की विपुल संभावनाएँ हैं।

प्रश्न :

1. बहुधा परपरागित फसल है :
   - (क) मक्का
   - (ख) बाजरा
   - (ग) ज्वार
   - (घ) गेहूँ
2. स्वपरागण को बढ़ावा देने वाला अभिलक्षण है :
   - (क) एकलिंगता
   - (ख) स्वअनिषेच्यता
   - (ग) निमीलित परागण
   - (घ) नरबन्ध्यता
3. ग्राम्यन को परिभाषित कीजिए।
4. शुद्ध वंशक्रम किसे कहते हैं?
5. पादप पुरःस्थापन क्या है? फसल सुधार में इसका महत्त्व समझाइए।
6. पादप प्रजनन क्या है? इसमें आनुवंशिकी के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
7. कई फसलों में परपरागण ही होता है, स्वपरागण क्यों नहीं है? कारण स्पष्ट कीजिए।
8. फसल सुधार में पादप प्रजनन की प्राथमिक आवश्यकता का आधार क्या है? इसका फसल सुधार में महत्त्व बताइए।
9. संकरण की क्रियाविधि के विभिन्न चरणों को संक्षिप्त में लिखिए।
10. बहुगुणिता किसे कहते हैं? फसल सुधार में इसका महत्त्व समझाइए।
11. फसलों में सुधार की आधुनिक तकनीक का नाम बताइए। यह फसल सुधार में किस प्रकार लाभदायक है? समझाइए।